श्रीमद् भागवत का यह सार
भगवद् भक्ति ही आधार

श्रीमद्भागवत रसिक कुटुंब

युगल गीत

रोम रोम श्रीकृष्ण में डूबा, अंग अंग से उठती प्रीत।
अद्भुत छटा निहार प्रभु की, गोपियां गाती युगल गीत।।

नारायणं(न्) नमस्कृत्य, नरं(ञ्) चैव नरोत्तमम्।

देवीं(म्) सरस्वतीं(वँ) व्यासं(न्), ततो जयमुदीरयेत्

नामसङ्कीर्तनं(यँ) यस्य, सर्वपापप्रणाशनम्।

प्रणामो दुःखशमनस्, तं(न्) नमामि हरिं(म्) परम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

दशमः स्कन्धः

॥ अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥

श्रीशुक उवाच

गोप्यः(ख्) कृष्णे वनं(यँ) याते, तमनुद्रुतचेतसः ।

कृष्णलीलाः(फ्) प्रगायन्त्यो, निन्युर्दुःखेन वासरान् ॥ 1॥

तमनुद्रु+ तचेतसः, निन्युर्+ दुःखेन

श्री शुकदेवजी कहते हैं– परीक्षित! भगवान श्री कृष्ण के गौओं को चराने के लिए प्रतिदिन वन में चले जाने पर उनके साथ गोपियों का चित भी चला जाता था। उनका मन श्री कृष्ण का चिंतन करता रहता और वे वाणी से उनकी लीलाओं का गान करती रहती। इस प्रकार वे बड़ी कठिनाई से अपना दिन बितातीं।

गोप्य ऊचुः

वामबाहुकृतवामकपोलो,

वल्गितभ्रुरधरार्पितवेणुम् ।

कोमलाङ्गुलिभिराश्रितमार्गं(ङ्),

गोप्य ईरयति यत्र मुकुन्दः ॥ 2॥

वाम+ बाहुकृतवा+ मकपोलो ,वल्गित+ भ्रुरधरार्+ पितवेणुम् ,

कोमला(ङ्)+ गुलिभिरा+ श्रितमार्गं(ङ्)

व्योमयानवनिताः(स्) सह सिद्धैर्-

विस्मितास्तदुपधार्य सलज्जाः ।

काममार्गणसमर्पितचित्ताः(ख्),

कश्मलं(यँ) ययुरपस्मृतनीव्यः ॥ 3॥

व्योमया+ नवनिताः(स्), विस्मितास्+ तदु+ पधार्य ,

काम+ मार्गण+ समर्पित+ चित्ताः(ख्), ययु+ रपस्+ मृतनीव्यः

गोपियाँ आपस में कहतीं अरी सखी! अपने प्रेमी जनों को प्रेम वितरण करने वाले और द्वेष करने वालों तक को मोक्ष दे देने वाले श्यामसुन्दर नटनागर जब अपने बायें कपोल को बायीं बाँह की लटका देते हैं और अपनी भौंहें नचाते हुए बाँसुरी को अधरों से लगाते हैं तथा अपनी सुकुमार अंगुलियों को उसके छेदों पर फिराते हुए मधुर तान छेड़ते हैं, उस समय सिद्धिपत्नियाँ आकाश में अपने पति सिद्धिगणों के साथ विमानों पर चढ़कर आ जाती हैं और उस तान को सुन कर अत्यन्त ही चकित तथा विस्मित हो जाती हैं। पहले तो उन्हें अपने पतियों के साथ रहने पर भी चित्त की यह दशा देखकर लज्जा मालूम होती है; परन्तु क्षणभर में ही उनका चित्त कामबाण से बिंध जाता है, वे विवश और अचेत हो जाती हैं। उन्हें इस बात की सुधि नहीं रहती और उनके वस्त्र खिसक जाते हैं।

हन्त चित्रमबलाः(श्) शृणुतेदं(म्),

हारहास उरसि स्थिरविद्युत् ।

नन्दसूनुरयमार्तजनानां(न्),

नर्मदो यर्हि कूजितवेणुः ॥ 4॥

चित्र+ मबलाः(श्), नन्द+ सूनु+ रयमार्त+ जनानां(न्)

वृन्दशो व्रजवृषा मृगगावो,

वेणुवाद्यहृतचेतस आरात् ।

दन्तदष्टकवला धृतकर्णा,

निद्रिता लिखितचित्रमिवासन् ॥ 5॥

वेणु+ वाद्य+ हृतचेतस,दन्त+ दष्ट+ कवला, लिखित+ चित्र+ मिवासन्

अरी गोपियों! तुम यह आश्चर्य की बात सुनो! ये नन्दनन्दन कितने सुन्दर हैं। जब वे हँसते हैं तब हास्यरेखाएँ हार का रूप धारण कर लेती हैं, शुभ्र मोती-सी चमक ने लगती हैं। अरी वीर! उनके वक्षःस्थल पर लहराते हुए हार में हास्य की किरणें चमक ने लगती हैं। उनके वक्षःस्थल पर जो श्रीवत्स की सुनहली रेखा है, वह तो ऐसी जान पड़ती है, मानो श्याम मेघ पर बिजली ही स्थिर रूप से बैठ गयी है। वे जब दुःखी जनों को सुख देने के लिये, विरहियों के मृतक शरीर में प्राणों का संचार करने के लिये बाँसुरी बजाते हैं, तब व्रज के झुंड-के-झुंड बैल, गौएँ और हरिन उनके पास ही दौड़ आते हैं। केवल आते ही नहीं, सखी! दाँतों से चबाया हुआ घास का ग्रास उनके मुँह में ज्यों-का-त्यों पड़ा रह जाता है, वे उसे न निगल पाते और न तो उगल ही जाते हैं। दोनों कान खड़े करके इस प्रकार स्थिर भाव से खड़े हो जाते हैं, मानों सो गये हैं या केवल भीत पर लिखे हुए चित्र हैं। उनकी ऐसी दशा होना स्वाभाविक ही है, क्योंकि यह बाँसुरी की तान उनके चित्त चुरा लेती है।

बर्हिण*स्तबकधातुपलाशैर्-

ब*द्धमल्लपरिबर्हविड*म्बः ।

कर्हिचित् सबल आलि स गोपैर्-

गाः(स्) समाह्वयति य*त्र मुकु*न्दः ॥ 6॥

बर्हिणस्+ तबकधा+ तुपलाशैर् , बद्ध+ मल्ल+ परिबर्ह+ विडम्बः,समाह्+ वयति

तर्हि भ*ग्नगतयः(स्) सरितो वै,

त*त्पदाम्बुजरजोऽनिलनीतम् ।

स्पृहयतीर्वयमिवाबहुपु*ण्याः(फ्),

प्रेमवेपितभुजाः(स्) स्तिमितापः ॥ 7॥

भग्न+ गतयः(स्) ,तत्पदाम्+ बुजरजोऽ+ निलनीतम् ,

स्पृहयतीर्+ वयमिवा+ बहुपुण्याः(फ्), प्रेम+ वेपित+ भुजाः(स्)

हे सखि! जब वे नन्द के लाड़ले लाल अपने सिर पर मोर पंख का मुकुट बाँध लेते हैं, घुँघराली अलकों में फूल के गुच्छे खोंस लेते हैं, रंगीन धातुओं से अपना अंग-अंग रँग लेते हैं और नये-नये पल्लवों से ऐसा वेष सजा लेते हैं, जैसे कोई बहुत बड़ा पहलवान हो और फिर बलराम जी तथा ग्वाल बालों के साथ बाँसुरी में गौओं का नाम ले-लेकर उन्हें पुकारते है; उस समय प्यारी सखियों! नदियों की गति भी रुक जाती है। वे चाहती हैं कि वायु उड़ा कर हमारे प्रियतम के चरणों की धूलि हमारे पास पहुँचा दे और उसे पाकर हम निहाल हो जायँ, परन्तु सखियों! वे भी हमारे ही जैसी मन्द भागिनी हैं। जैसे नन्द नन्दन श्रीकृष्ण का आलिंगन करते समय हमारी भुजाएँ काँप जाती है और जड़ता रूप संचारीभाव का उदय हो जाने से हम अपने हाथों को हिला भी नहीं पातीं, वैसे ही वे भी प्रेम के कारण काँपने लगती हैं। दो-चार बार अपनी तरंग रूप भुजाओं को काँपते-काँपते उठाती तो अवश्य हैं, परन्तु फिर विवश होकर स्थिर हो जाती हैं, प्रेमा वेश से स्तंभित हो जाती हैं।

अनुचरैः(स्) समनुवर्णितवीर्य,

आदिपूरुष इवाचलभूतिः ।

वनचरो गिरितटेषु चरन्तीर्-

वेणुनाऽऽह्वयति गाः(स्) स यदा हि ॥ 8॥

सम+ नुवर्णि+ तवीर्य ,इवा+ चलभूतिः, वेणुनाऽऽह्+ वयति

वनलतास्तरव आत्मनि विष्णुं(वँ),

व्यं(ञ्)जयन्त्य इव पुष्पफलाढ्याः ।

प्रणतभारविटपा मधुधाराः(फ्),

प्रेमहृष्टतनवः(स्) ससृजुः(स्) स्म ॥ 9॥

वनलतास्+ तरव, पुष्प+ फलाढ्याः, प्रणत+ भार+ विटपा ,प्रेम+ हृष्ट+ तनवः(स्)

अरी वीर! जैसे देवता लोग अनन्त और अचिन्त्य ऐश्वर्यों के स्वामी भगवान नारायण की शक्तियों का गान करते हैं, वैसे ही ग्वाल बाल अनन्त सुन्दर नटनागर श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान करते रहते हैं। वे अचिन्त्य ऐश्वर्य-सम्पन्न श्रीकृष्ण जब वृन्दावन में विहार करते हैं और बाँसुरी बजा कर गिरिराज गोवर्धन की तराई में चरती हुई गौओं को नाम ले-लेकर पुकारते हैं, उस समय वन के वृक्ष और लताएँ फूल और फलों से लद जाती हैं, उनके भार से डालियाँ झुक कर धरती छूने लगती हैं,मानो प्रणाम कर रही हों, वे वृक्ष और लताएँ अपने भीतर भगवान विष्णु की अभिव्यक्ति सूचित करती हुई-सी प्रेम से फूल उठती हैं, उनका रोम-रोम खिल जाता है और सब-की-सब मधुधाराएँ ऊँड़ेल ने लगती हैं।

दर्शनीयतिलको वनमाला-

दिव्यगन्धतुलसीमधुमत्तैः ।

अलिकुलैरलघुगीतमभीष्ट-

माद्रियन् यर्हि सन्धितवेणुः ॥ 10॥

दर्शनी+ यतिलको , दिव्यगन्ध+ तुलसी+ मधुमत्तैः, अलिकुलै+ रलघुगी+ तमभीष्ट ,सन्धि+ तवेणुः

सरसि सारसहं(म्)सविहङ्गाश्-

चारुगीतहृतचेतस एत्य ।

हरिमुपासत ते यतचित्ता,

हन्त मीलितदृशो धृतमौनाः ॥ 11॥

सारस+ हं(म्)स+ विहङ्गाश्, चारु+ गीतहृत+ चेतस ,हरि+ मुपासत, मीलि+ तदृशो

अरी सखी! जितनी भी वस्तुएँ संसार में या उसके बाहर देखने योग्य हैं, उन में सबसे सुन्दर, सबसे मधुर, सबके शिरो मणि हैं ये हमारे मनमोहन। उनके साँवले ललाट पर केसर की खौर कितनी फबती है बस, देखती ही जाओ! गले में घुटनों तक लटकती हुई वनमाला, उसमें पिरोयी हुई तुलसी की दिव्य गन्ध और मधुर मधु से मतवाले होकर झुंड-के-झुंड भौंरें बड़े मनोहर एवं उच्च स्वर से गुंजार करते रहते हैं। हमारे नटनागर श्याम सुन्दर भौंरों की उस गुन गुनाहट का आदर करते हैं और उन्हीं के स्वर में स्वर मिला कर अपनी बाँसुरी फूँकने लगते हैं। उस समय सखि! उस मुनीजन मोहन संगीत को सुनकर सरोवर में रहने वाले सारस-हंस आदि पक्षियों का भी चित्त उनके हाथ से निकल जाता है, छिन जाता है। वे विवश होकर प्यारे श्याम सुन्दर के पास आ बैठते हैं तथा आँखें मूँद, चुपचाप, चित्त एकाग्र करके उनकी आराधना करने लगते हैं मानो कोई विहंगमवृत्ति के रसिक परम हंस ही हों, भला कहो तो यह कितने आश्चर्य की बात है।

सहबलः(स्) स्रगवतं(म्)सविलासः(स्),

सानुषु* क्षितिभृतो व्रजदेव्यः ।

हर्षयन् यर्हि वेणुरवेण,

जातहर्ष उपरम्भति* विश्वम्* ॥ 12॥

स्रगवतं(म्)+ सविलासः(स्),क्षिति+ भृतो, वेणु+ रवेण

महदति* क्रमणशं(ङ्)कितचेता,

मन्दम्* मन्दमनुगर्जति मेघः ।

सुहृदम्* भ्यवर्षत् सुमनोभिश्*-

छायया च विदधत् प्रतपत्रम्* ॥ 13॥

महदति+ क्रमणशं(ङ्)+ कितचेता, मन्द+ मन्द+ मनुगर्जति, सुहृदमभ्+ यवर्षत्

अरी व्रजदेवियों! हमारे श्याम सुन्दर जब पुष्पों के कुण्डल बनाकर अपने कानों में धारण कर लेते हैं और बलराम जी के साथ गिरिराज के शिखरों पर खड़े होकर सारे जगत् को हर्षित करते हुए बाँसुरी बजाने लगते हैं बाँसुरी क्या बजाते हैं, आनन्द में भरकर उसकी ध्वनि के द्वारा सारे विश्व का आलिंगन करने लगते हैं उस समय श्याम मेघ बाँसुरी की तान के साथ मन्द-मन्द गरजने लगता है। उसके चित्त में इस बात की शंका बनी रहती है कि कहीं मैं जोर से गर्जना कर उठूँ और वह कहीं बाँसुरी की तान के विपरीत पड़ जाय, उसमें बेसुरा पन ले आये, तो मुझसे महात्मा श्रीकृष्ण का अपराध हो जायगा। सखी! वह इतना ही नहीं करता; वह सब देखता है कि हमारे सखा घनश्याम को घाम लग रहा है, तब वह उनके ऊपर आकर छाया कर लेता है, उनका छत्र बन जाता है। अरी वीर! वह तो प्रसन्न होकर बड़े प्रेम से उनके ऊपर अपना जीवन ही निछावर कर देता है नन्हीं-नन्ही फुहियों के रूप में ऐसा बरसने लगता है, मानो दिव्य पुष्पों की वर्षा कर रहा हो। कभी-कभी बादलों की ओट में छिपकर देवता-लोग भी पुष्प वर्षा कर जाया करते हैं।

विविधगोपचरणेषु विदग्धो,

वेणुवाद्य उरुधा निजशिक्षाः ।

तव सुतः(स्) सति यदाधरबिम्बे,

दत्तवेणुरनयत् स्वरजातीः ॥ 14॥

विविध+ गोप+ चरणेषु ,यदा+ धरबिम्बे ,दत्तवेणु+ रनयत्

सवनशस्तदुपधार्य सुरेशाः(श्),

शक्रशर्वपरमेष्ठिपुरोगाः ।

कवय आनतकन्धरचित्ताः(ख्),

कश्मलं(यँ) ययुरनिश्चिततत्त्वाः ॥ 15॥

सवनशस्+ तदु+ पधार्य , शक्रशर्व+ परमेष्ठि+ पुरोगाः,

आनत+ कन्ध+ रचित्ताः(ख्),यायु+ रनिश्चित+ तत्त्वाः

सतीशिरोमणि यशोदाजी! तुम्हारे सुन्दर कुँवर ग्वाल बालों के साथ खेल खेलने में बड़े निपुण हैं। रानीजी! तुम्हारे लाड़ले लाल सब के प्यारे तो हैं ही, चतुर भी बहुत हैं। देखो, उन्होंने बाँसुरी बजाना किसी से सीखा नहीं। अपने ही अनेकों प्रकार राग-रागिनियाँ उन्होंने निकाल लीं। जब वे अपने बिम्बाफल सदृश लाल-लाल अधरों पर बाँसुरी रखकर ऋषभ, निषाद आदि स्वरों की अनेक जातियाँ बजाने लगते हैं, उस समय वंशी की परम मोहिनी और नयी तान सुन कर ब्रह्मा, शंकर और इन्द्र आदि बड़े-बड़े देवता भी जो सर्वज्ञ हैं उसे नहीं पहचान पाते। वे इतने मोहित हो जाते हैं कि उनका चित्त तो उनके रोकने पर भी उनके हाथ से निकल कर वंशीध्वनि में तल्लीन हो ही जाता है, सिर भी झुक जाता है, और वे अपनी सुध-बुध खोकर उसी में तन्मय हो जाते हैं।

निजपदाब्जदलैर्ध्वजवज्र-

नीरजां(ङ्)कुशविचित्रललामैः ।

व्रजभुवः(श्) शमयन् खुरतोदं(वँ),

वर्ष्मधुर्यगतिरीडितवेणुः ॥ 16॥

निजपदाब्+ जदलैर्+ ध्वज+ वज्र ,

नीरजां(ङ्)+ कुशविचित्र+ ललामैः, वर्ष्म+ धुर्यगति+ रीडित+ वेणुः

व्रजति तेन वयं(म्) सविलास,

वीक्षणार्पितमनोभववेगाः ।

कुजगतिं(ङ्) गमिता न विदामः(ख्),

*केश्मलेन कबरं(वँ) वसनं(वँ) वा ॥ 17॥

वीक्षणार्+ पितमनो+ भववेगाः

अरी वीर! उनके चरण कमलों में ध्वजा, वज्र, कमल, अंकुश आदि के विचित्र और सुन्दर-सुन्दर चिन्ह हैं। जब व्रज भूमि गौओं के खुर से खुद जाती है, तब वे अपने सुकुमार चरणों से उसकी पीड़ा मिटाते हुए गजराज के समान मन्द गति से आते हैं और बाँसुरी भी बजाते रहते हैं। उनकी वह वंशी ध्वनि, उनकी वह चाल और उनकी वह विलास भरी चितवन हमारे ह्रदय में प्रेम के, मिलन की आकांक्षा का आवेग बढ़ा देती है। हम उस समय इतनी मुग्ध, इतनी मोहित हो जाती हैं कि हिल-डोल तक नहीं सकतीं, मानों हम जड़ वृक्ष हों! हमें तो इस बात का भी पता नहीं चलता कि हमारा जूडा खुल गया है या बँधा है, हमारे शरीर पर का वस्त्र उतर गया है या है।

मणिधरः(ख्) क्वचिदागणयन् गा,

मालया दयित*गन्धतु*लस्याः ।

प्रणयिनोऽनुच*रस्य कदां(म्)से,

*प्रक्षिपन् भुजमगायत *यत्र ॥ 18॥

क्वचिदा+ गणयन्, दयित+ गन्ध+ तुलस्याः, प्रणयिनोऽ+ नुचरस्य

क्वणितवेणुरववं(ञ्)चितचित्ताः(ख्),

*कृष्ण*मन्वसत *कृष्णगृ*हिण्यः ।

गुणगणार्णमनु*गत्य ह*रिण्यो,

गोपिका इव वि*मुक्तगृहाशाः ॥ 19॥

क्वणित+ वेणु+ रववं(ञ्)+ चितचित्ताः(ख्), कृष्ण+ मन्+ वसत,

गुणगणार्+ णमनुगत्य, विमुक्त+ गृहाशाः

अरी वीर! उनके गले में मणियों की माला बहुत ही भली मालूम होती है। तुलसी की मधुर गन्ध उन्हें बहुत प्यारी है। इसी से तुलसी की माला को तो वे कभी छोड़ते ही नहीं, सदा धारण किये रहते हैं। जब वे श्याम सुन्दर उस मणियों की माला से गौओं की गिनती करते-करते किसी प्रेमी सखा के गले में बाँह डाल देते हैं और भाव बता-बताकर बाँसुरी बजाते हुए गाने लगते हैं, उस समय बजती हुई उस बाँसुरी के मधुर स्वर से मोहित होकर कृष्ण सार मृगों की पत्नी हरिनियाँ भी अपना चित्त उनके चरणों पर निछावर कर देती हैं और जैसे हम गोपियाँ अपने घर-गृहस्थी की आशा-अभिलाषा छोड़कर गुण सागर नागर नन्द नन्दन को घेरे रहतीं हैं, वैसे ही वे भी उनके पास दौड़ आती हैं और वहीँ एक टक देखती हुई खड़ी रह जाती हैं, लौटने का नाम भी नहीं लेतीं।

कुन्ददामकृतकौतुकवेषो,

गोपगोधनवृतो यमुनायाम् ।

नन्दसूनुरनघे तव वत्सो,

नर्मदः(फ्) प्रणयिनां(वँ) विजहार ॥ 20॥

कुन्ददा+ मकृत+ कौतुकवेषो, गोप+ गोध+ नवृतो ,नन्दसू+ नुरनघे

मन्दवायुरुपवात्यनुकूलं(म्),

मानयन् मलयजस्पर्शेन ।

वन्दिनस्तमुपदेवगणा ये,

वाद्यगीतबलिभिः(फ्) परिवव्रुः ॥ 21॥

मन्द+ वायुरुप+ वात्य+ नुकूलं(म्),मलय+ जस्पर्शेन ,

वन्दिनस्+ तमुप+ देवगणा, वाद्य+ गीत+ बलिभिः(फ्)

नन्दरानी यशोदाजी! वास्तव में तुम बड़ी पुण्यवती हो। तभी तो तुम्हें ऐसे पुत्र मिले हैं। तुम्हारे वे लाड़ले लाल बड़े प्रेमी हैं, उनका चित्त बड़ा कोमल है। वे प्रेमी सखाओं को तरह-तरह से हास-परिहास के द्वारा सुख पहुँचाते हैं। कुन्द कली का हार-पहनकर जब वे अपने को विचित्र वेष में सजा लेते हैं और ग्वाल बाल तथा गौओं के साथ यमुना जी के तट पर खेलने लगते हैं, उस समय मल यज चन्दन के समान शीतल और सुगन्धित स्पर्श से मन्द-मन्द अनुकूल बहकर वायु तुम्हारे लाल की सेवा करती हैं और गन्धर्व आदि उपदेवता वंदीजनों के समान गा-बजाकर उन्हें संतुष्ट करते हैं तथा अनेकों प्रकार की भेंटें देते हुए सब ओर से घेरकर उनकी सेवा करते हैं।

वत्सलो व्रजगवां(यँ) यदगंध्रो,

वन्द्यमानचरणः(फ्) पथि वृद्धैः ।

कृत्स्नगोधनमुपोह्य दिनान्ते,

गीतवेणुरनुगेडितकीर्तिः ॥ 22॥

वन्द्यमा+ नचरणः(फ्),कृत्स्न+ गोध+ नमुपोह्य ,गीत+ वेणुरनु+ गेडित+ कीर्तिः

उत्सवं(म्) श्रमरुचापि दृशीना-

मुन्नयन् खुररजश्छुरितस्रक्।

दित्सयैति सुहृदाशिष एष,

देवकीजठरभूरुडुराजः॥ 23॥

खुर+ रजश्+ छुरित+ स्रक्, देवकी+ जठरभू+ रुडुराजः

अरी सखी! श्याम सुन्दर व्रज की गौओं से बड़ा प्रेम करते हैं। इसीलिये तो उन्होंने गोवर्धन धारण किया था। अब वे सब गौओं को लौटा कर आते ही होंगे; देखो, सायं काल हो चला है। तब इतनी देर क्यों होती है, सखी ? रास्ते में बड़े-बड़े ब्रह्मा आदि वयोवृद्ध और शंकर आदि ज्ञानवृद्ध उनके चरणों की वन्दना जो करने लगते हैं। अब गौओं के पीछे-पीछे बाँसुरी बजाते हुए वे आते ही होंगे। ग्वालबाल उनकी कीर्ति का गान कर रहे होंगे। देखो न, यह क्या आ रहे हैं। गौओं के खुरों से उड़-उड़कर बहुत-सी धूल वनमाला पर पड़ गयी है। वे दिन भर जंगलों में घूमते-घूमते थक गये हैं। फिर भी अपनी इस शोभा से हमारी आँखों को कितना सुख, कितना आनन्द दे रहे हैं। देखो, ये यशोदा की कोख से प्रकट हुए सब को आह्लादित करने वाले चन्द्रमा हम प्रेमी जनों की भलाई के लिये, हमारी आशा-अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिये ही हमारे पास चले आ रहे हैं।

मदविघूर्णितलोचन ईषन्,

मानदः(स्) स्वसुहृदां(वँ) वनमाली ।

बदरपाण्डुवदनो मृदुगण्डं(म्),

मण्डयन् कनककुण्डललक्ष्म्या ॥ 24॥

मदविघूर्+ णित+ लोचन ,बदर+ पाण्डु+ वदनो, कनक+ कुण्डल+ लक्ष्म्या

यदुपतिर्द्विरदराजविहारो,

यामिनीपतिरिवैष दिनान्ते ।

मुदितवक्त्र उपयाति दुरन्तं(म्),

मोचयन् व्रजगवां(न्) दिनतापम् ॥ 25॥

यदुपतिर्+ द्विर+ दराज+ विहारो, यामिनी+ पति+ रिवैष, मुदि+ तवक्त्र

सखी! देखो कैसा सौन्दर्य है! मदभरी आँखें कुछ चढ़ी हुई हैं। कुछ-कुछ ललाई लिये हुए कैसी भली जान पड़ती हैं। गले में वन माला लहरा रही है। सोने के कुण्डलों की कान्ति से वे अपने कोमल कपोलों को अलंकृत कर रहे हैं। इसी से मुँह पर अधपके बेर के समान कुछ पीला पन जान पड़ता है और रोम-रोम से विशेष करके मुख कमल से प्रसन्नता फूटी पड़ती है। देखो, अब वे अपने सखा ग्वालबालों का सम्मान करके उन्हें विदा कर रहे हैं। देखो, देखो सखी! व्रज-विभूषण श्रीकृष्ण गजराज के समान मदभरी चाल से इस सन्ध्या वेला में हमारी ओर आ रहे हैं। अब व्रज में रहने वाली गौओं का, हम लोगों का दिन भर का असह्य विरह-ताप मिटाने के लिये उदित होने वाले चन्द्रमा की भाँति ये हमारे प्यारे श्याम सुन्दर समीप चले आ रहे हैं।

श्रीशुक उवाच

एवं(वँ) व्रजस्त्रियो राजन्, कृष्णलीला नु गायतीः ।

रेमिरेऽहः(स्)सु तच्चित्तास्- तन्मनस्का महोदयाः ॥ 26॥

तच्+ चित्तास्

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित्! बड़भागिनी गोपियों का मन श्रीकृष्ण में ही लगा रहता था। वे श्रीकृष्ण मय हो गयी थीं। जब भगवान श्रीकृष्ण दिन में गौओं को चराने के लिये वन में चले जाते, तब वे उन्हीं का चिन्तन करतीं रहतीं और अपनी-अपनी सखियों के साथ अलग-अलग उन्हीं की लीलाओं का गान करके उसी में रम जाती। इस प्रकार उनके दिन बीत जाते।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहं(म्)स्यां(म्) सं(म्)हितायां(न्)

दशमस्कन्धे पूर्वार्धे वृन्दावनक्रीडायां(ङ्)

गोपिकायुगलगीतं(न्)नाम पञ्चत्रिं(म्) शोऽध्यायः ॥

ॐ पूर्णमदः(फ्) पूर्णमिदं(म्)पूर्णात्पूर्णमुदच्यते

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

ॐ शान्तिः(श्)शान्तिः(श्)शान्तिः॥